पुनर्नवा

पुनर्नवा के दो भेद-रक्त एवं श्वेत, निघण्टुओं में मिलते हैं। रा. नि. में एक नील भेद भी लिखा है, जो दिखलाई नहीं देता। दो भिन्न वर्गों की दो वनस्पतियाँ Boerhaavia diffusa (बोएहॅविया डिफ्यूजा) एवं Trianthema portulacastrum (ट्राएन्थेमा पोर्टुलेकॅस्ट्रम्-पथरी) का उपयोग पुनर्नवा के नाम से हो रहा है। इनमें से प्रथम को अधिकांश विद्वानों ने रक्त-पुनर्नवा माना है जो उचित नहीं है। वास्तव में प्रथम में ही रक्तपुष्प एवं श्वेतपुष्प के भेद से दो भेद पाये जाते हैं तथा द्वितीय में भी श्वेतपुष्प एवं रक्तपुष्प भेद देखे जाते हैं। ऐसी स्थिति में केवल बोएहॅविया को रक्त पुनर्नवा एवं ट्राएन्थिमा (पथरी) को श्वेतपुनर्नवा मानना उचित नहीं है। रा. नि. में पुनर्नवा के भेदों के अतिरिक्त वर्षाभू एवं वसुक[१] नामों से दो अलग वनस्पतियों का उल्लेख किया गया है। पुनर्नवा के पर्यायों में क्षुद्रवर्षाभू यह पर्याय आया हुआ है। श्री ठा० बलवन्त सिंह जी पुनर्नवा और वर्षाभू दो भिन्न वनस्पतियाँ मानते हैं न कि पर्याय। इस सम्बन्ध में 'बिहार की वनस्पतियाँ' नामक पुस्तक में वे लिखते हैं—

'मेरे मत से पुनर्नवा और वर्षाभू दो सर्वथा भिन्न वनस्पतियाँ हैं परन्तु दोनों के रूप और गुणों में बहुत कुछ साम्य होने से निघण्टुकारों ने दोनों में बहुत गड़बड़ कर दिया है। अनेक स्थान के वैद्य आज भी इसे ही (ट्राएन्थिमा) पुनर्नवा और कुछ इसे केवल श्वेतपुनर्नवा मानते हैं। स्मरण रखना चाहिये कि श्वेत और रक्त भेद पुनर्नवा और वर्षाभू दोनों में ही होते हैं। अतः रक्तपुनर्नवा और श्वेतपुनर्नवा Boerhaavia (बोएहॅविया) जातियों को और रक्तवर्षाभू तथा श्वेतवर्षाभू Trianthema (ट्राएन्थेमा-पथरी) की जातियों को कहना चाहिये। वर्षाभू की ही किसी जाति को वसुक-मानना चाहिये।'

उपर्युक्त स्पष्टीकरण के आधार पर The Wealth of India (Raw Materials) Vol I नामक पुस्तक में उल्लिखित श्री चक्रवर्ती का यह मत कि B. diffusa को रक्तपुनर्नवा एवं T. portulacastrum को श्वेत पुनर्नवा मानना चाहिये उचित नहीं मालूम पड़ता। दोनों वनस्पतियों में गुणों में कुछ समता पाई जाती है जिस कारण संभव है निघण्टुकारों ने दोनों नामों को पर्याय में दिया हो। निघण्टुकारों ने वर्ण के आधार पर श्वेत एवं रक्त के गुण अलग लिखे हैं या इन दो उपर्युक्त भेदों के अलग-अलग गुण दिये हैं यह कहना कठिन है।

वर्षाभू (पथरी) केवल बरसात में उगती है तथा शीतकाल तक सूख जाती है इसी कारण इसे वर्षाभू कहा गया है। पुनर्नवा यद्यपि वर्षाकाल में अधिक होती है तथापि अन्य ऋतुओं में भी मिलती है। यहाँ पर दोनों का अलग-अलग वर्णन किया गया है।

अथ श्वेतपुनर्नवा । तस्या नामानि गुणाँश्चाह

पुनर्नवा श्वेतमूला शोथघ्नी दीर्घपत्रिका । कटु कषायानुरसा पाण्डुघ्नी दीपनी परा।
शोफानिलगरश्लेष्महरी ब्रध्नोदरप्रणुत् ॥ २३१ ॥

सफेद पुनर्नवा के नाम और गुण—पुनर्नवा, श्वेतमूला, शोथघ्नी और दीर्घपत्रिका इतने नाम सफेद पुनर्नवा के हैं। सफेद पुनर्नवा—कटु तथा कषाय रसयुक्त, पाण्डुरोगनाशक, अत्यन्त अग्निदीपक एवं शोथ, वायु, विष, कफ, ब्रध्न और उदररोग को दूर करने वाली होती है ॥ २३१ ॥

अथ रक्तपुष्पा पुनर्नवा । तस्या नामगुणानाह

पुनर्नवाऽपरा रक्ता रक्तपुष्पा शिलाटिका। शोथघ्नी क्षुद्रवर्षाभूर्वर्षकेतुः कठिल्लकः ॥ २३२ ॥
पुनर्नवाऽरुणा तिक्ता कटुपाका हिमा लघुः । वातला ग्राहिणी श्लेष्मपित्तरक्तविनाशिनी ॥

लाल पुनर्नवा के नाम व गुण—रक्तपुनर्नवा, रक्तपुष्पा, शिलाटिका, शोथघ्नी, क्षुद्रवर्षाभू, वर्षकेतु और कठिल्लक ये सब हैं। लाल पुनर्नवा—तिक्त रसयुक्त, विपाक में कटु रसयुक्त, शीतल, हलकी, वातकारक, मलसंग्राही एवं कफ, पित्त और रक्तविकार को दूर करने वाली होती है ॥ २३२-२३३ ॥

११९ वर्षाभू (पथरी)

हि०—सफेद पुनर्नवा, पथरी, विषखपरा, सुफेद गदपुरना। बं०—सावुनी। म०—वसु। गु०—साटोडी। क०—बिलेगणजलि, मुच्चुकोनि। ते०—गलिजेरु। ता०—शरूनै। पं०—विशकापा। ले०—*Trianthema portulacastrum Linn.* (ट्राएन्थेमा पोर्टुलेकॅस्ट्रम्, लिन.)। Fam. Ficoidaceae (फिकॉइडेसी)।

यह भारतवर्ष के सभी भागों में एवं बलूचिस्तान, लंका तथा अन्य उष्ण प्रदेशों में पाई जाती है। इसका क्षुप-प्रसरणशील, मांसल तथा अनेक द्विविभक्त शाखाओं वाला होता है। यह बरसात में उगता है और शीत काल तक सूख जाता है। कोमल अवस्था में पुनर्नवा जैसा दिखलाई देने के कारण कुछ लोग इसे श्वेत पुनर्नवा मानते हैं। पत्तियाँ—मांसल लगभग अभिमुख, किन्तु प्रत्येक जोड़े में एक छोटी तथा दूसरी बड़ी, ऊपर वाली बड़ी १८ से २७ मि. मि. लंबी, १८-३१ मि. मि. चौड़ी तथा नीचे की ९-१८ मि. मि. लंबी एवं ६-१८ मि. मि. चौड़ी, चिकनी, अभिलट्वाकार, आयताकार या अण्डाकार, प्रायः लाल एवं लहरदार धार वाली होती हैं। पर्णवृन्त ६-१८ मि. मि. लंबा, आधार की तरफ फैला हुआ एवं पतला रहता है। पुष्प—एकाकी, विनाल, श्वेत या गुलाबी रंग के फूल द्विविभक्त शाखाओं के बीच से निकलते हैं। नरकेसर संख्या में १०-२० होते हैं। बीजकोश छोटा एवं १-५ काले रंग के वृक्काकार छोटे बीजों से युक्त होता है। जड़-ताजी अवस्था में कुछ मधुराम किन्तु सूखने पर कडुवी एवं ह्रल्लास कारक होती है।

इसकी जड़ एवं पंचांग का चिकित्सा में व्यवहार किया जाता है।

रासायनिक संगठन—पुनर्नवा में पाया जाने वाला क्षाराभ पुनर्नवीन (Punarnavine) इसमें भी पाया जाता है जो शुष्क द्रव्य में ०·०१% तक होता है। इसके अतिरिक्त सेपोनिन् (Saponin) एवं एक अन्य क्षाराभ जिसका रासायनिक सूत्र $C_{32}H_{46}O_6N_2$ है, पाया जाता है।

गुण और प्रयोग—इसके पत्र मूत्रल होते हैं तथा इनका उपयोग पुनर्नवा जैसा होता है किन्तु जड़–तीव्ररेचन होती है। गर्भिणी को देने पर आंत्र-प्रक्षोभ के साथ साथ गर्भाशय पर भी प्रभाव होने से कभी कभी गर्भपात भी होता है। इसके पत्तों का शाक दीपन वातहर एवं कफघ्न है।

(१) जिनमें तीव्र विरेचन की आवश्यकता रहती है उन रोगों में इसके मूल का चूर्ण सोंठ के साथ मिला कर २, ३ बार में थोड़ा-थोड़ा करके देते हैं। यकृतोदर, जीर्ण मलावष्टम्भ एवं तज्जन्य कंडु आदि त्वचा के रोग तथा पांडु में इसे देते हैं। इससे रेचन होकर शोथ कम हो जाता है। इससे श्वास में भी लाभ होता है।

(२) गर्भाशय विकार के कारण उत्पन्न अनार्तव में भी इसका प्रयोग करते हैं।

मात्रा—१५ ६० गुंजा।

१२० पुनर्नवा

हि०–लाल पुनर्नवा, सांठ, गदहपुर्ना। बं०–पुनर्नवा। म०–पुनर्नवा, घेंटुली। गु०–राती साटोडी, वसेडो। क०–सनाडिका। ते०–अटात मामिडि। पं०–खट्टन। ता०–मुकत्ते। अ०–इन्दकूकी। अं०–Hogweed; Horse purslene (हागवीड, हॉर्स पर्सलेन)। ले०–*Boerhaavia diffusa Linn.* (बोएहॅविया डिफ्यूझा लिन.)। Fam. Nyctaginaceae (निक्टॅजिनेसी)।

यह भी भारतवर्ष, बलूचिस्तान, लंका तथा अन्य उष्ण प्रदेशों में पाया जाता है। यह रेतीली तथा परती जमीन में अधिक होता है। इसका **क्षुप**–फैलने वाला, बहुवर्षायु, मृदुरोमश या चिकना होता है। इसके काण्ड ०·६–०·९ मी. लम्बे, प्रायः ललाई लिये हुये कड़े, पतले, गोल एवं पर्वसन्धि पर मोटे होते हैं। क्वचित् केवल हरे काण्ड के क्षुप भी देखने में आते हैं। शाखाएँ कई गज तक फैल जाती हैं। **पत्ते**–सनाल, चौड़े, लट्वाकार, प्रत्येक पर्वसन्धि पर छोटे बड़े जोड़े में। बड़े २·५–३·७ से. मी. लम्बे एवं छोटे १२–१७ मि. मी. लम्बे तथा अधर तल पर श्वेताभ चिकने होते हैं। **पुष्प**–छोटे, गुलाबी या श्वेत लगभग अवृन्त, ४–१० की संख्या में एक लम्बे दण्ड पर आते हैं। पुंकेशर २–३ होते हैं। **फल**–६ मि. मी. लम्बा, ५ धारीदार, चिपचिपा तथा एक बीज से युक्त होता है। **जड़**–बड़ी तथा मूलकाकार होती है।

भेद–इसके दो भेद और पाये जाते हैं। एक में मूल कन्दसदृश तथा पत्रादि छोटे होते हैं। यह शुष्क भूमि में अधिक होती है। दूसरी लता जाति की होती है। इसे B. repanda, Willd (बो. रिपॅन्डा, वाइल्ड) कहते हैं। यह आरोहणशील या प्रसरणशील होती है। इसमें आमने सामने के दोनों पत्ते प्रायः कद में समान होते हैं। इसकी जड़ कन्द सदृश मोटी किन्तु भंगुर होती है।

चिकित्सा में इसके पत्र एवं मूल का उपयोग किया जाता है।

रासायनिक संगठन—इसके पत्तों में पुनर्नवीन (Punarnavine) नामक कार्यकारी क्षाराभ की मात्रा शुष्क द्रव्य में ०·०१% तक होती है। मूल में संपूर्ण क्षाराभ की मात्रा ०·०४% होती है। इसके अतिरिक्त इसमें पोटॅशियम् नाइट्रेट (Potassium nitrate), सल्फेट (Sulp-

hates), क्लोराइड (Chlorides) ६·५% एवं स्थिर तैल होता है। बिल्ली में क्षाराभ के शिराभ्यंतर सूचिकाभरण से रक्त का दबाव बढ़ता है तथा मूत्रत्याग अधिक होता है।

गुण और प्रयोग—पुनर्नवा मधुर, तिक्त, उष्ण, रूक्ष, स्वेदोपग, वयःस्थापन, विरेचन, दीपन, मूत्रविरेचन, कफघ्न, अधिक मात्रा में वामक एवं शोथहर है।

इसका प्रयोग शोथ, सर्वांगशोथ, उदर, कामला, मूत्राल्पता, पाण्डु, हृद्रोग, श्वास, उरःक्षत, सोजाक, विषविकार एवं नेत्रविकारों में किया जाता है।

(१) पुनर्नवा के मूत्रल गुण के कारण अनेक शोथयुक्त विकारों में इसका प्रयोग किया जाता है। नूतन यकृत विकार तथा जीर्ण उदरावरणशोथ के कारण उत्पन्न जलोदर में अन्य मूत्रल औषधियों की अपेक्षा इसका विशेष प्रभाव पड़ता है। जब वृक्क का कार्य ठीक होता रहता है उस अवस्था में यह अच्छा कार्य करती है। इसमें उपस्थित पोटॅशियम् के लवण इसमें के कार्यकारी क्षाराभ के कार्य को बढ़ाते हैं। उन रोगियों में जिनके मूत्र में अल्ब्यूमिन अधिक रहता है उतना अच्छा मूत्रल प्रभाव नहीं पड़ता। यकृत, वृक्क, उदरावरण आदि अवयवों में जब बहुत अधिक अवयवीय विकार हो जाता है तब इससे केवल अस्थायी लाभ होता है शोथ में इसको पीस कर गरम कर लेप भी करते हैं।

(२) हृद्रोग में कास, श्वास, जलोदर एवं पैर की सूजन कम करने के लिये कुटकी, चिरायता एवं सोंठ के साथ इसका प्रयोग करते हैं। हृदय पर इसकी क्रिया कुछ डिजिटैलिस सदृश होती है।

(३) कामला में पित्त के निर्हरण के लिये इसका प्रयोग करते हैं।

(४) कफयुक्त श्वास में तथा श्वसनिकाशोथ में सोंठ तथा वच के साथ इसको देने से कफ निकलता है। अधिक मात्रा से वमन होकर भी कफ निकल जाता है।

(५) इसके शाक का उपयोग शोथ में तथा कुपचन में करते हैं।

(६) अभिष्यन्द आदि नेत्र रोगों में इसकी ताजी जड़ मधु में पीस कर आँख में लगाते हैं तथा आंतरिक प्रयोग भी करते हैं।

(७) वृश्चिकदंश, सर्पदंश, मूषिकविष आदि में इसका बाह्य एवं आंतरिक प्रयोग लाभदायक माना जाता है।

(८) रसायन के लिये इसके मूल के उपयोग का विधान है।

मात्रा—मूल-स्वरस ६ मा०–१ तो०; पत्रस्वरस १–२ तो०। वामक–मूल चूर्ण ५–१० माशा।

२६७. पुनर्नवा

परिचय

गण—वयःस्थापन, कासहर, स्वेदोपग, अनुवासनोपग (च०), विदारिगंधादि (सु०)।

कुल—पुनर्नवा-कुल (निक्टेजिनेसी-Nyctaginaceae)।

नाम—लै०-बोर्हेविया डिफ्युजा (Boerhavia diffusa Linn.); सं०-पुनर्नवा (पुनः पुनर्नवा भवति-जो फिर से प्रतिवर्ष नवीन हो जाय; शरीरं पुनर्नवं करोति-जो रसायन एवं रक्तवर्धक होने से शरीर को पुनः नया बना दे), शोथघ्नी (शोथनाशक); हि०-गदहपुरना, गदहविण्डो; बं०-पुनर्नवा, गदापुष्पा; पं०-इटसिट; म०-घेटुली; गु०-साटोडी, बसेडो; ता०-सुकुएट्टि; ते०-आतातासामिदि; अ०-हन्दकूकी; अं०-स्प्रेडिंग हॉगवीड (Spreading hogweed)।

स्वरूप—इसका बहुवर्षायु प्रसरणशील क्षुप २-३ फुट लम्बा होता है। वर्षा में इसके नये पौधे निकलते हैं और ग्रीष्म में सूख जाते हैं। **पत्र**-१-१½ इंच लम्बे, गोल या अण्डाकार, मांसल, मृदुरोमश, अभिमुख क्रम से होते हैं। **पुष्प**-सूक्ष्म, गुलाबी या श्वेत, प्रायः अवृन्त, छोटे मुण्डकों में होते हैं। परिपुष्प यष्टिकाकार, पुंकेशर-२-३; फल ·१२ इंच लम्बे, मुद्गरवत्, पंचरेखीय, ग्रंथियुक्त होते हैं। **मूल**-स्थूल, दृढ़ और श्वेत होता है। वर्षाकाल में पुष्प और फल आते हैं।

जाति—निघण्टुओं में यह दो प्रकार की कही गई है—१. श्वेत २. रक्त। राजनिघण्टु ने एक नील जाति का भी उल्लेख किया है। वानस्पतिक दृष्टि से इसकी एक और प्रजाति B. repanda Willd है जिसका मूल भंगुर, शाखायें छः फीट तक लम्बी तथा पत्ते त्रिकोण-लट्वाकार होते हैं।

उत्पत्तिस्थान—यह समस्त भारत में उत्पन्न होता है।

रासायनिक संघटन—इसमें पुनर्नवीन (Punarnavine) नामक एक किञ्चित् तिक्त क्षाराभ (०·०४ प्रतिशत), पोटाशियम नाइट्रेट ०·५२ प्रतिशत पाये जाते हैं। भस्म में सल्फेट, क्लोराइड, नाइट्रेट और क्लोरेट पाये जाते हैं।

गुण

गुण—लघु, रूक्ष
रस—मधुर, तिक्त, कषाय
विपाक—मधुर
वीर्य—उष्ण

कर्म

दोषकर्म—यह त्रिदोषहर है। मधुर-तिक्त-कषाय होने से पित्त का तथा उष्ण होने से कफ-वात का शमन करता है।

संस्थानिक कर्म-बाह्य—यह लेखन और शोथहर है।

आभ्यन्तर-पाचनसंस्थान—यह दीपन, अनुलोमन, रेचन है। बड़ी मात्रा में वामक है।

रक्तवहसंस्थान—हृद्य, रक्तवर्धक और शोथहर है। इससे हृदय की क्रिया तीव्र होती है तथा रक्तभार बढ़ता है।

श्वसनसंस्थान—कासहर है।

प्रजननसंस्थान—इसके बीज वृष्य हैं।

मूत्रवहसंस्थान—मूत्रजनन है। रक्तभार बढ़ने से मूत्रनिर्माण अधिक होता है।

त्वचा—स्वेदजनन है। कुष्ठघ्न है।

तापक्रम—ज्वरघ्न है।

सात्मीकरण—रसायन है। विषघ्न भी है।

प्रयोग

दोषप्रयोग—यह त्रिदोषज विकारों में प्रयुक्त होता है।

संस्थानिक प्रयोग-बाह्य—शोथरोग में पुनर्नवा से स्वेदन, उपनाह, लेप या इससे सिद्ध तैल का अभ्यंग करते हैं। नेत्ररोगों में इसका स्वरस देते हैं।

आभ्यन्तर-पाचनसंस्थान—अग्निमांद्य, उदररोग तथा विबन्ध में पुनर्नवा पिलाते हैं। वमन के लिए ६ ग्रा० की मात्रा में देते हैं।

रक्तवहसंस्थान—हृद्रोग, पांडु और शोथ के लिए यह अतीव उपयोगी है। शोथ में इसके पत्र का शाक भी खिलाते हैं।

श्वसनसंस्थान—कास, श्वास और उरःक्षत में देते हैं।

प्रजननसंस्थान—रक्तप्रदर में रक्तपुनर्नवा का मूलस्वरस तथा वाजीकरणार्थ बीजों का प्रयोग करते हैं।

मूत्रवहसंस्थान—मूत्रकृच्छ्र में देते हैं।

त्वचा—कुष्ठ में देते हैं।

तापक्रम—ज्वर विशेषतः चतुर्थक में प्रयुक्त होता है।

सात्मीकरण—दौर्बल्य में प्रयुक्त होता है। सर्प, मूषिक आदि विषों में पिलाते हैं।

विविध भाषाओं में नाम-

सं.- श्वेत पुनर्नवा, शोथघ्नी, दीर्घ पत्रिका। हि.- सफेद पुनर्नवा, विष खपरा, सफेद सांठ, सफेद गदहपूरना। बं.- श्वेत गादा बन्ने, श्वेत पुष्पा। म.- पौंडरी, फेदुली, श्वेत पुष्पा। गु.- धोली साटोड़ी, विलीय दुवेल्लड किलु। ते.- गाछ-जेस, अतिकिम्मेदि। ता.- मुकारत्तै कीटै। अ.- इन्दुकूत्री, अन्दकोक। फा.- दल्वअस्पत। ले.- ट्री एन्थेमा पेटेंट्रा।

रक्तपुनर्नवा- सं.- रक्तपुनर्नवा, रक्तपुष्पा, शिवाटिका, शोथघ्नी, क्षुद्रवर्षाभूः- कठिल्लिका। हि.- लालपुनर्नवा, लालविसखपड़ा, लाल सौठ, गदहपूरना। बं.- रक्त आदावन्ने। म.- तांबड़ी, घटेली, रक्तवसु। गु.- रोता फलवाली सारोमी। क.- केम्प, वेल्लड किल्दु, कडिगण जिटे। ते.- तेक्ला, अटाता मामिडि। ता.- मुक्राटे, तामिलामा। फा.- इस्पिस्त सहराई। अ.- रतेवा। ले.- बियरहेविया डिफ्यूसा।

उत्पत्तिबोधिका सं.- वर्षाभूः। **गुणप्रकाशिका सं.-** शोथघ्नी।

गुण एवं दोष-

धन्वन्तरीय निघण्टु व राज निघण्टु के अनुसार- पुनर्नवा (गदहपूरना) उष्ण, तिक्तरस तथा रूक्ष है और

कफ विकार का नाश करती है। यह शोथ पाण्डुरोग, हृदयरोग, कास, उरःक्षत तथा शूल को दूर करती है। लाल पुनर्नवा तिक्तरसवाली है, सारक है तथा शोथ नाशक है। यह रक्त प्रदर दोष का नाश करती है, पाण्डुरोग तथा पित्त विकार का मर्दन करती है।

राजनिघण्टु के अनुसार- सफेद पुनर्नवा उष्ण तथा तिक्तरस है ओर कफ विकार एवं विष विकार को दूर करती है। यह कास, हृदयरोग, शूल, रक्त विकार, पाण्डु रोग, शोथ तथा वातजन्य पीड़ा को दूर करती है। नीला पुनर्नवा तिक्तरस, कटुरस, उष्ण तथा रसायन है। यह हृदय रोग, पाण्डु रोग, शोथ, श्वास, वात-विकार तथा कफ विकार को दूर करती है।

भावप्रकाश के अनुसार- पुनर्नवा कटु रस तथा कषायानुरस है, पाण्डुनाशक है, उत्तम जाठराग्नि दीपक है। यह शोथ, वात विकार, विष विकार तथा कफ विकार को दूर करती है और रोग तथा उदर रोग को नष्ट करती है। यह कास, हृदयरोग, अर्शरोग, शूल तथा वात विकार को नष्ट करती है। रक्त पुनर्नवा तिक्तरस, पाक में कटुरस, शीतल तथा लघु है। यह वातकारक तथा ग्राही है, और कफ विकार, पित्त विकार एवं रक्त विकार का नाश करती है।

राजवल्लभ के अनुसार- पुनर्नवा उष्ण वीर्य, मलभेदक तथा रसायन गुणवाली है। यह कफ विकार, वात विकार, आमविकार, अर्शरोग, ब्रण रोग, शोथ रोग तथा उदररोग को दूर करती है।

वैद्यक शास्त्र में पुनर्नवा का प्रयोग-

कुष्ठरोग में पुनर्नवा का प्रयोग- कुष्ठ रोगी के लिए दधिमण्ड में मिलाकर पुनर्नवा का कल्क लेप करे। (च.चि.अ.७)।

(१) **अश्मरी में पुनर्नवा का प्रयोग**- अश्मरी रोग में पुनर्नवा के कल्क तथा क्वाथ से सिद्ध अन्न का प्रयोग करे। (सु.चि.अ.७) (२) **शोथ में पुनर्नवा का प्रयोग**- पुनर्नवा का कषाय या कल्क अदरक मिलाकर पान करे। अनुपान प्रतिदिन एक मास तक सेवन करे। (सु.चि.अ.२३)। (३) **मूषिक विष में पुनर्नवा का प्रयोग**- श्वेत पुनर्नवा के कल्क को मधु के साथ मूषिक विष में चाटे। (सु.वि.अ.६)। (४) **अलर्क विष में पुनर्नवा का प्रयोग**- श्वेत पुनर्नवा को धतूर के साथ अलर्क विष में प्रयोग करे। (सु.क.अ.६)। (५) **ज्वर में पुनर्नवा का प्रयोग**- पुनर्नवा के रस या जल के साथ दूध पकावे और जल के जल जाने पर क्षीर मात्र शेष रहने पर ज्वर के रोगी को पान कराये। यह सभी प्रकार के ज्वर को दूर करता है। (सु.उ.अ.३९)।

(१) **मदात्यय में पुनर्नवा का प्रयोग**- दूध, पुनर्नवा का क्वाथ तथा यष्टीमधु (मुलेठी) के कल्क के साथ विधिवत सिद्ध घृत पान करने से मद्यपान से नष्ट ओजवालों के लिए पुष्टिकारक होता है। (वृन्द, मदात्यय चि.)। (२) **रसायन कार्य के लिए पुनर्नवा का प्रयोग**- नवीन पुनर्नवा आधा पल (२५० ग्राम) का कल्क जो दूध के साथ आधा मास (१५ दिन तक) पान करता है, दो मास पान करता है, ६ माह पान करता है तथा एक वर्ष तक पान करता है वह दुर्बल एवं जीर्ण होने पर भी पुनः नवीन होता जाता है। (वृन्द. रसायानाधिकार)।

(१) **शोथ में पुनर्नवा घृत का प्रयोग**- पुनर्नवा के कल्क तथा क्वाथ के साथ सिद्ध घृत पान करने से शोथ को दूर करता है। (चक्र. शोथ चि.)। (२) **विद्रधि में श्वेत पुनर्नवा का प्रयोग**- श्वेत पुनर्नवा के मूल का जल के साथ क्वाथ बनाकर पान करने से अपक्व विद्रधि को पका देता है। (चक्र. विद्रधि चि.)। (३) **विष दोष को दूर करने के लिए सफेद पुनर्नवा का प्रयोग**- सफेद पुनर्नवा के मूल का कल्क चावल के धोअन के साथ पुष्य नक्षत्र में पान करने से विषधर सर्प के विष के उपद्रव को एक मास या एक वर्ष में दूर करता है। (चक्र. विद्रधि चि.)।

(१) **उर:क्षत में पुनर्नवा का प्रयोग-** जब मनुष्य में रक्त शोथ पक जाय तब पुनर्नवा का क्वाथ पान कराये। (हारीत. चि. अ.१०)। (२) **निद्रा के लिए पुनर्नवा का प्रयोग-** पुनर्नवा का क्वाथ मनुष्यों के लिए निद्राकर होता है। (हारीत.चि.अ.१६)।

(१) **आमवात में पुनर्नवा का प्रयोग-** कपूर कचरी तथा सोंठ का कल्क पुनर्नवा के क्वाथ में मिलाकर सात दिन तक पान करे। यह मनुष्य के आमवात रोग का नाश करता है। (भाव.म.ख.अ.२)। (२) **नेत्र रोग में पुनर्नवा का प्रयोग-** पुनर्नवा के दूध से नेत्र कण्डू, मधु के साथ नेत्र स्राव, घी के साथ नेत्र पुष्प (फोलिक बिन्द), तेल के साथ तिमिर रोग और काञ्जी के साथ प्रयोग करने से निशान्धता दूर होती है जैसे से सूर्य अन्धकार दूर होता है। भाव.म.अ.४)।

(१) **चातुर्थक ज्वर में सफेद पुनर्नवा का प्रयोग-** सफेद पुनर्नवा के मूल के कल्क का दूध के साथ पान करने से पुराने समय से उत्पन्न चातुर्थिक ज्वर दूर होता है अथवा ताम्बुल के तरह खाने से चातुर्थिक ज्वर दूर होता है। (बंगसेन ज्वर चि.)। (२) **वातकण्टक नामक वात रोग में श्वेत पुनर्नवा का प्रयोग-** श्वेत पुनर्नवा के मूल के कल्क तथा क्वाथ के साथ विधिवत तैल सिद्ध करे। यह तैल पैर में अभ्यङ्ग करने से वातकण्टक नामक वात रोग को नष्ट करता है। (बंगसेन वातव्याधि चि.)। (३) **आमवात में पुनर्नवा शाक का प्रयोग-** आमवात रोग में पुनर्नवा के शाक का प्रयोग हितकर है। (बंगसेन-आमवात चि.)।